IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

ज्ञान योग: स्वामी विवेकानंद

1Pradeep Kumar, 2Dr.Sanjay Kumar Singh

1Research Scholar , 2Professor

1Dr. B.R Ambedkar University Agra,

2Dr. B.R Ambedkar University Agra (IOP Vrindavan,Mathura)

स्वामी विवेकानंद के धार्मिक विचारों का मूलाधार शंकराचार्य का अद्वैतवाद है। आदि शंकराचार्य ने उपनिषदों के ऋषियों की अनुभूतियों को दार्शनिक रूप प्रदान किया । शंकराचार्य के दर्शन को अद्वैतवाद कहा जाता है । अद्वैतवाद के अनुसार ब्रह्म ही सत्य हैं, जगत मिथ्या हैं, जीव और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है । विवेकानंद शंकर के इस मंतव्य को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करते है। विवेकानंद कहते हैं कि परमात्मा अनंत और अद्वितीय है । वह निर्गुण- निराकार होते हुए भी गुण- साकार रूप में अभिव्यक्त होता है। शंकराचार्य ब्रह्म के निर्गुण रूप को ही प्राथमिकता देते हैं, जबकि विवेकानंद ब्रह्म के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों को समान महत्व प्रदान करते हैं

विवेकानंद का कहना है कि जगत परमात्मा का ही रूप है। यदि हम जगत को परमात्मा का स्वरूप समझकर उससे प्रेम और कर्तव्य कर्म से जुड़ते हैं तो हमें ब्रह्म के तात्विक स्वरूप का बोध हो सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि शंकर ने जहां आत्म साक्षात्कार के लिए ज्ञान को महत्व प्रदान किया था वहीं पर विवेकानंद आत्म साक्षात्कार अथवा ईश्वर साक्षात्कार के लिए भक्ति और कर्म को भी महत्व प्रदान किया।

विवेकानंद भारत के ऐसे महान धार्मिक और दार्शनिक है जिन्होंने धर्म को व्यावहारिक रूप प्रदान करने का सबसे अधिक प्रयास किया । धर्म को सैद्धांतिक और सांप्रदायिक सीमा से मुक्त करने में जितना प्रयास विवेकानंद ने किया उतना प्रयास शायद ही किसी अन्य महापुरुष ने किया हो । उन्होंने पहली बार धर्म को अंधविश्वास, धार्मिक संकीर्णता और सांप्रदायिक सीमा से मुक्त कर धर्म को अत्यंत व्यापक रूप प्रदान किया- अर्थात धर्म को उसकी पूर्णता में प्रस्तुत किया। उनका कहना हैं-' धर्म अनुभव और आत्म परिवर्तन का विषय है।'(1) स्वामी जी के इस कथन से स्पष्ट है की धर्म को अनुभव के धरातल पर देखना होगा। यदि कोई धार्मिक होने का दावा करता है तो उसके दावे की पुष्टि यही होगी

कि उसने धर्म को किस तरह से अनुभव किया है। यदि धर्म अनुभव और आत्म परिवर्तन नहीं करता है तो निश्चित रूप से वह धर्म नहीं है। स्वामी जी का कहना है चेतना का रूपांतरण के बिना धर्म का मूल्य नहीं है। जब हमारी चेतना रूपांतरित होती है तो हमें अपनी दिव्यता का बोध होता है। हम यह अनुभव करने लगते हैं कि शरीर, मन और बुद्धि यह सब हमारे ऊपरी आवरण है हमारा तात्विक स्वरूप नित्य और शाश्वत है। हम अन्य जीवों से और ब्रह्मांड से अलग नहीं है। यह अनुभव यह बताता है कि हम धार्मिक हैं। धर्म का कार्य है मनुष्य की चेतना को रूपांतरित कर उसे परम चेतना से जोड़ देना। इस बात की पुष्टि स्वामी जी के इस कथन से होती है। वह कहते हैं -'धर्म किसी मत या मतवाद में नहीं है बल्कि अस्तित्व को रूपांतरित कर परम सत्य को प्रत्यक्ष करने में है।'(2) यहां पर हम देख सकते हैं कि विवेकानंद ने धर्म को विज्ञान की तरह प्रस्तुत किया है। जिस प्रकार विज्ञान में किसी नियम का ज्ञान होता है और उसे नियम के द्वारा हम कुछ निश्चित परिणाम प्राप्त करते हैं। ठीक उसी प्रकार विभिन्न धार्मिक संप्रदाय कुछ अनुशासन के द्वारा धार्मिक अनुभूतियों को प्राप्त करते हैं। यहां भी प्रयोग और परीक्षण के माध्यम से चेतना का रूपांतरण करने का उपाय होता है। इस प्रकार धर्म को व्यवहारिक जीवन में प्रयोग कर अनुभव रूपी परीक्षण पर खरा उतरना होता है। यदि धर्म हमारी चेतना का विस्तार करता है अर्थात हमें हमारी दिव्यता का अनुभव करा देता है तो ही वह वास्तविक धर्म है। यदि हम किसी धार्मिक पथ पर चलने का दावा करते हैं और वह हमारे भीतर रूपांतरण और परिवर्तन नहीं करता है तो विवेकानंद की दृष्टि में हम धर्म से बहुत दूर है । प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य है अपनी दिव्यता का विकास करना।(3) धर्म इसी दिव्यता के विकास करने का साधन है। यहां पर एक बात स्पष्ट करना आवश्यक है वह यह है अद्वैत वेदांत यह कहता है कि प्रत्येक प्रत्येक जीव अपने तात्विक स्वरूप में दिव्य है। अर्थात नित्य, शाश्वत, और चैतन्य स्वरूप है। माया के कारण वह अपनी वास्तविकता को भूल गया है। अपने स्वरूप का ज्ञान जब तक नहीं होता तब तक हम सीमित और बंधन में हैं। सारे धर्म, सारी साधना पद्धतियां व्यक्ति में निहित दिव्यता को अर्थात उसकी वास्तविकता को अभिव्यक्त करने के मार्ग हैं। विवेकानंद ने भारतीय धार्मिक परंपरा में अपने आत्म स्वरूप को प्राप्त करने के मार्गो को दार्शनिक एवं व्यावहारिक रूप प्रदान किया। भारतीय धार्मिक परंपरा में तत्व साक्षात्कार के लिए चार मार्गों का उल्लेख किया गया है। इन चारों मार्गों को विवेकानंद ने चार योग के नाम से प्रस्तुत किया। जो इस प्रकार हैं- ज्ञान योग, भक्ति योग, कर्म योग और राज् योग। व्यक्ति अपने प्रवृत्ति और स्वभाव के अनुसार इनमें से किसी एक मार्ग का चयन कर अपने तात्विक स्वरूप का अनुभव प्राप्त कर सकता है। विवेकानंद कहते हैं -'लक्ष्य एक होते हुए भी उसे प्राप्त करने के मार्ग भिन्न हो सकते हैं।'(4) इस प्रकार मार्ग को लेकर किसी प्रकार की दुविधा नहीं होनी चाहिए। क्योंकि अंत में सभी एक ही लक्ष्य को प्राप्त करते हैं ,और वह है- परमात्मा । 'सभी एक ही केंद्र- ईश्वर तक ले जाने वाले विभिन्न मार्ग हैं।'(5) हम यह नहीं कह सकते कि हमारा मार्ग श्रेष्ठ है और दूसरे का मार्ग श्रेष्ठ नहीं है। इसलिए विवेकानंद कहते हैं-' सभी धर्म और सभी उपासना पद्धतियां हमें एक ही परम लक्ष्य तक ले जाती है।'(6)

प्रस्तुत लेख में स्वामी विवेकानंद के विचारों के प्रकाश में ज्ञान योग के दार्शनिक स्वरूप को समझने का प्रयास किया जाएगा। धर्म को अनुभव करने के लिए ज्ञान योग की प्रासंगिकता आज के युग का अनिवार्य सत्य है। क्योंकि आज के युग में बौद्धिक विकास के साथ ही साथ वैज्ञानिक प्रगति ने चिंतन क्षेत्र को विकसित और व्यापक कर दिया है । ऐसे में धर्म को भी वैज्ञानिक और तार्किक रूप में उपस्थित होकर मानव मूल्यों को प्रस्तुत करना होगा। ज्ञान योग के दार्शनिक

स्वरूप के द्वारा अंधविश्वास और काल्पनिक मान्यताओं से मुक्ति मिलेगी और धर्म को मनुष्य के जीवन से जीवंत रूप से जोड़ने में सहायक होगा।

ज्ञान योग:

मानवीय चेतना के तीन पक्ष हैं- बुद्धि तत्व, भावना तत्व और क्रिया तत्व । मनुष्य में यह तीनों तत्व आवश्यक रूप से रहते हैं। इन तीनों तत्वों में कोई एक तत्व व्यक्ति में मुख्य होता है। अन्य तत्व उसके सहायक होते हैं। व्यक्ति में जिस तत्व की प्रधानता होती है उसी के अनुरूप उसके जीवन की दिशा तय होती है। बुद्धि तत्व की प्रधानता से व्यक्ति तर्कशील होता है। भावना तत्व की प्रधानता से व्यक्ति हृदय प्रधान होता है ,अर्थात उसमें समर्पण और प्रेम की भावना अधिक होती है। क्रिया तत्व की प्रधानता से व्यक्ति कर्मशील होता है वह सेवा और कर्तव्य कर्मों को जीवन में प्रमुख स्थान देता है। धर्म के क्षेत्र में जो व्यक्ति बुद्धि प्रधान होता हैं, वह ज्ञान योग के मार्ग पर चलकर अपने वास्तविक स्वरूप को उपलब्ध करता है । जो व्यक्ति हृदय प्रधान होता है वह भक्ति योग के मार्ग पर चलता है और ईश्वर से एक होकर शाश्वत आनंद को प्राप्त करता है । जो व्यक्ति क्रिया प्रधान होता है वह कर्म योग के मार्ग पर चलता है । वह कर्तव्य कर्मों को करते हुए अपने समस्त कर्मों को ईश्वर को अर्पित कर मुक्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त विवेकानंद ने राजयोग की बात कही है । जो व्यक्ति प्रयोग और परीक्षण के माध्यम से आगे बढ़ना चाहते हैं उनके लिए इस मार्ग पर चलना सुविधाजनक है। इस मार्ग पर चलने वाले योगी को संसार के रहस्य के साथ ही साथ मन की शक्तियों का भी ज्ञान तीव्रता से होता है। प्रकृति और मन के समस्त रहस्य को जानने के बाद अंत में वह आत्म साक्षात्कार के लक्ष्य की प्राप्ति कर लेता है। यह विधि विज्ञान की तरह प्रयोग और परीक्षण का सहारा लेती है। विवेकानंद कहते हैं राजयोग पर चलने वाले साधकों को योग्य गुरु के निरीक्षण में ही प्रयोग और परीक्षण करना चाहिए ,अन्यथा शक्ति के जागरण से नुकसान होने की संभावना है। (7)

बुद्धि प्रधान व्यक्ति की विशेषता होती है कि वह संसार और अपने विषय में- बुद्धि अर्थात विवेक से जानना चाहता है। इस खोज में या तो वह भौतिक जगत की वास्तविकताओं का आविष्कार करता है या अंतर जगत मे प्रवेश कर आत्म तत्व का अनुभव करता है। भौतिक जगत के अन्वेषण में व्यक्ति भौतिक नियमों को खोज कर भौतिक जगत का ज्ञान प्राप्त करता हैं, जबकि धार्मिक व्यक्ति आत्म अनुशासन द्वारा साधना मार्ग पर चलकर आत्म जगत का ज्ञान प्राप्त करता है। जिसे हम ईश्वर साक्षात्कार अथवा आत्म साक्षात्कार कहते हैं। ज्ञान योगी का सबसे प्रमुख प्रश्न स्वयं को लेकर होता है। मैं कौन हूं ?की खोज ही उसका लक्ष्य है । ऐसे व्यक्तियों में अपने स्वरूप को जानने की तीव्र जिज्ञासा होती है।

शास्त्र कहते हैं- आत्मा नित्य और आनंद स्वरूप है । आत्मा का ज्ञान जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है। जबकि हमारा व्यावहारिक अनुभव बताता है कि हम शरीर ,मन ,बुद्धि ,अहंकार तक सीमित है। जब हम विज्ञान की तरफ देखते हैं तो विज्ञान हमें बताता है मनुष्य भौतिक जड़ तत्वों का संयोग है उसमें आत्मा जैसी कोई तत्व नहीं है। इसके अतिरिक्त विज्ञान में इस बात को भी स्पष्ट कर दिया है कि प्रकृति में घटनाएं किसी नियम से घटती है । जो घटना एक बार घट चुकी है वह घटना बार-बार घटती है । क्योंकि प्रकृति में एकरूपता का नियम है । जब विज्ञान की इस बात को हम गहराई से विचार करते हैं और उपनिषद के ऋषियों के वक्तव्य को समझते हैं, तो हमारे भीतर एक प्रश्न उठता है, कि क्या उनके

अनुभव को दोहराया जा सकता है ? जिन अनुभवों को प्राचीन ऋषियों ने प्राप्त किया है क्या वह हमें मिल सकता है। यदि किसी नियम के पालन से कोई घटना घटती है तो वह इस नियम के द्वारा पुनः घट सकती है यह वैज्ञानिक सत्य है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि ऋषियों ने आत्म तत्व का ज्ञान प्राप्त किया है तो हमें भी आत्म साक्षात्कार हो सकता है । जिस नियम से अथवा जिस अनुशासन विधि से उन्होंने आत्म साक्षात्कार किया हैं, यदि इस नियम अथवा अनुशासन का हम उपयोग करें तो हमें भी आत्मज्ञान हो सकता है। विवेकानंद कहते हैं कि "प्राचीन ऋषियों ने जिस सत्य का साक्षात्कार किया है उन्हें आज भी प्रत्यक्ष किया जा सकता हैं- आवश्यकता है तो बस वैसे ही तीव्र पिपासा और वैसी ही साधना की।"(8) यदि हम कहें कि ऐसा नहीं हो सकता है तो इसका अर्थ है प्रकृति में एकरूपता का नियम नहीं है । जो कि वैज्ञानिक ज्ञान के विपरीत है। विवेकानंद इस बात पर जोर देते हैं कि "यदि किसी एक व्यक्ति को भी किसी आध्यात्मिक सत्य का अनुभव हुआ है तो यह अनुभव सिद्ध करता है कि वह सत्य हर साधक द्वारा अनुभव किया जा सकता है, क्योंकि प्रकृति में एकरूपता का नियम है।'(8) स्पष्ट है कि यदि हम अंधविश्वास, पूर्वाग्रह ,धार्मिक संकीर्णता को छोड़कर निष्पक्ष होकर सत्य का अन्वेषण करते हैं तो निश्चित रूप से सत्य ही उपलब्ध होगा। वह कहते हैं कि वाद-विवाद और किताबी ज्ञान से सत्य को नहीं जाना जा सकता । इसलिए साधना द्वारा पहुंचना होता है। उसका साक्षात्कार करना होगा। विवेकानंद कहते हैं-' यदि साधक ने खुद सत्य का अनुभव न किया हो तो इसका ज्ञान कोरा बुद्धि विलास है।" (2)

ज्ञान योग की पूर्व मान्यताएं:

विवेकानंद के अनुसार भारतीय दार्शनिक परंपरा में अद्वैतवाद ज्ञान योग का सर्वोच्च प्रतिनिधि है । विवेकानंद ने दुनिया को भारतीय दर्शन की इस महानता से परिचय कराया कि भारतीय धार्मिक परंपरा जीव को ब्रह्म स्वरूप स्वीकार करती है। जीवो में तात्विक स्तर पर कहीं भी किसी भी प्रकार का कोई भेद नहीं है । सारा भेद व्यवहारिक है और अवास्तविक है। अविद्या के कारण जीव अपने वास्तविक स्वरूप को अनुभव नहीं कर रहा है। इस अज्ञान को ज्ञान के द्वारा निरस्त कर जीव अपने वास्तविक आत्म स्वरूप का अनुभव करता है। शरीर, मन ,बुद्धि ,अहंकार यह सब अज्ञान के ही रूप है । हमारा वास्तविक स्वरूप नित्य और आनंद स्वरूप है। विवेकानंद कहते हैं-' ज्ञान वह दीपक है जो अंधकार को मिटाता है ,जैसे-जैसे यह ज्ञान बढ़ता है वैसे-वैसे अज्ञान और मोह दूर होते जाते हैं'।(9)

अपने नित्य और असीम स्वरूप का बोध ही प्रत्येक जीव का लक्ष्य है। सभी जीव एक ही है। एक ही अनेक रूपों में प्रतीत हो रहा है । यह प्रतीति भी तभी तक है जब तक अविद्या है। अविद्या के कारण जब तक अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान नहीं होता तब तक यह प्रतीति बनी रहती है । जिसके कारण हम सीमित जीव के रूप में जन्म और मृत्यु के बंधन में रह कर दुख प्राप्त करते हैं। विवेकानंद कहते हैं आत्मज्ञान के द्वारा अपने अद्वैत स्वरूप का बोध करना जीवन का उद्देश्य है। यह परम आनंद और दुखों से सदैव के लिए समाप्ति की अवस्था है। यहां पर यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है की आत्मा और ब्रह्म दोनों भिन्न तत्व नहीं है इसलिए ब्रह्म तत्व का ज्ञान विज्ञान की विधि से नहीं हो सकता। क्योंकि विज्ञान द्वैत पर आधारित है। वह ज्ञाता और ज्ञेय पर कार्य करता है। द्वैत पर आधारित ज्ञान सीमित

होता है । समस्त सीमित ज्ञान संसार के संबंध में होता है। इसलिए धार्मिक विधि से आत्मा के अद्वैत स्वरूप का बोध करना होता है । यहां पर ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय समाप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि ब्रह्म तत्व का ज्ञान वस्तुनिष्ठ रूप से नहीं होता। क्योंकि आत्मा और ब्रह्म भिन्न नहीं है इसलिए आत्म तत्व का ज्ञान ब्रह्म से एकात्म होकर ही होता है।

साधना पद्धति:

स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि आत्मज्ञान के लिए वेदांत द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करना होता है। वेदांत में आत्म साक्षात्कार के लिए श्रवण, मनन और निदिध्यासन का मार्ग दिया गया है । विवेकानंद कहते हैं - विवेक, वैराग्य, 6 सद्गुण और मुमुक्षा -यह साधना के चार चरण हैं, जिन पर चलकर साधक ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करता है। विवेक से नित्य और अनित्य वस्तुओं का ज्ञान होता है। जब व्यक्ति यह जान लेता है कि जगत परिवर्तनशील है और वस्तुएं अनित्य तथा उनके स्वभाव में ही दुख देना है। तब सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह नष्ट हो जाता है। व्यक्ति अनित्य के प्रति पूरी तरह से अनासक्त हो जाता है। अनित्य के प्रति वैराग्य उत्पन्न होने पर साधक नित्य तत्व आत्मा को प्राप्त करने की जिज्ञासा करता है। अद्वैतवाद में यही विवेक दृष्टि है। विवेक दृष्टि ही वैराग्य को जन्म देती है। स्पष्ट है कि विवेक अर्थात ज्ञान ही वैराग्य को जन्म देता है । यही वैराग्य शाश्वत आत्मा को जानने की तीव्र प्यास जागृत करता हैं, जिसे मुमुक्षा कहते हैं। विवेक ,वैराग्य और मुमुक्षा को धारण करने के बाद दृढ़ संकल्प लेकर साधक 6 सद्गुणों को जीवन में उतारता है। यह छह सद्गुण हैं- शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान । अंत में इन चरणों का अनुपालन कर साधक आत्मज्ञान को उपलब्ध होता है। विवेकानंद पूर्ण ज्ञान को समाधि और निर्विकल्प ज्ञान कहते हैं। यह अद्वैत की स्थिति है। यहां पर जीव और ब्रह्म का भेद समाप्त हो जाता है। साधक कहता है -'अहम् ब्रह्मास्मि' । स्वामी जी कहते हैं-' जैसे समुद्र की लहरें समुद्र से भिन्न नहीं होती वैसे ही आत्मा ब्रह्म से भिन्न नहीं है। यह तो माया का भ्रम है जो हमें भिन्न अनुभव कराती है।'(10)

निष्कर्ष:

स्वामी विवेकानंद अद्वैतवाद को सभी धर्मों की कीआधारशिला बताते हैं। अद्वैत वेदांत की वैज्ञानिकता और दर्शनिकता को विश्व पटल पर रखकर स्वामी जी धर्म को व्यावहारिक दृष्टि देते हैं। उनके अनुसार अद्वैतवाद ही विश्व बंधुत्व का आधार बन सकता है। क्योंकि यही एक ऐसी दार्शनिक और धार्मिक दृष्टि है जिसमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है तथा यह तर्क और अनुभव को पूरी तरह संतुष्ट करता है । सभी इसकी शरण में अपना आत्म उद्धार कर सकते हैं। दूसरी ओर अन्य मतों की अपेक्षा अद्वैतवाद तार्किक और वैज्ञानिक भी है । अद्वैतवाद के इस मान्यता को कि - 'संपूर्ण ब्रह्मांड एक अविभाज्य परमात्मा हैं, और हम सभी उसी के अंग है- स्व- चेतना और परमात्मा भिन्न नहीं है।(11)

यदि हम समझ सके तो संसार में किसी प्रकार का द्वेष और संकीर्णता नहीं रहेगी। विवेकानंद की दृष्टि में यह कोई मान्यता या सिद्धांत नहीं है बल्कि यह पूरी तरह तार्किक और वैज्ञानिक होने के साथ साथ अनुभवजन्य भी है। स्वामी जी कहते हैं जैसे-जैसे हम ज्ञान योग की साधना में आगे बढ़ते हैं, हम अपनी चेतना का विस्तार करते हैं। हमें अन्य जीवों

में भी अपनी ही चेतना का अनुभव होने लगता है । हम अपने जीवन में इस अनुभव का प्रमाण प्राप्त कर सकते हैं। जैसे -साधक दूसरों के दुख से दुखी होने लगता है , और दूसरों की प्रसन्नता में प्रसन्न होने लगता है । यही इस बात का प्रमाण है कि हमारी चेतना दूसरों में भी है। साधना के उच्चतम शिखर पर जब आत्मा का संपूर्ण ज्ञान हो जाता है तब साधक संपूर्ण जगत के प्रति प्रेमपूर्ण हो जाता है। सारी संकीर्णता मिट जाती है । आधुनिक समय में जब हम विज्ञान और तकनीकी के युग में हैं- धर्म के नाम पर, संस्कृति के नाम पर, क्षेत्र और वर्ण के नाम पर, जाति और संप्रदाय के नाम पर एक दूसरे से भेदभाव करते हैं। आपस में लड़ते हैं और युद्ध करते हैं। जिससे मानव को सुख और शांति नहीं मिलती । ऐसे में विवेकानंद द्वारा प्रस्तुत ज्ञान योग को यदि हम आत्मसात करें तो सारे भेदभाव अपने आप मिट जाएंगे और मानवता अपने उच्चतम आदर्श विश्व बंधुत्व को प्राप्त कर सकती है। स्वामी जी के द्वारा प्रस्तुत इस आदर्श से ही मानव जाति को सुख, शांति और आनंद प्रदान किया जा सकता है। साथ ही साथ मनुष्य के उच्चतम मूल्य आत्म साक्षात्कार और जगत कल्याण के उद्देश्य की पूर्ति भी हो सकती है।

Reference and footnotes:

1.Vivekananda, Swami (2013).Letters of Swami Vivekananda, Kolkata Advait Ashram P.70

2. Vivekananda, Swami (1958). Complete Works of Swami Vivekananda, Vol. 2 Kolkata, Advaita Ashrama, P.396

3. Mitra, A. (2024, January 12). The Unique Message of Swami Vivekananda. Vivekananda International Foundation. Retrieved from https://www.vifindia.org/2024/january/12/the-unique-message-of-swami-vivekananda. (विवेकानंद के विचार: "religion is the manifestation of the divinity already in man.")

4. Vivekananda, Swami (2020). The Complete Works of Swami Vivekananda, Vol. 2. Kolkata: Advaita Ashrama, P. 383. (लेख: "The Goal and Methods of Realisation")

5. Vivekananda, Swami (2011). The Complete Works of Swami Vivekananda, Vol. 5. Kolkata: Advaita Ashrama, P. 227.

6 .Vivekananda, Swami(1907),The Complete Works of Swami Vivekananda, Vol. 1 . Kolkata : Advaita Ashrama, P.108

7. Vivekananda, Swami (1907). The Complete Works of Swami Vivekananda, Vol.1 Kolkata: Advaita Ashrama, P. 123.

8. Vivekananda, Swami(1997) The Complete Works of Swami Vivekananda Vol. 1. Kolkata: Advaita Ashrama, P.127

9..Vivekananda ,Swami. (2003) The Complete Works of Swami Vivekananda, Kolkata Advaita Ashrama, Vol 2, P. 24

10..Vivekananda, Swami, (2003) The Complete Works of Swami Vivekananda, Kolkata,vol. 2,Advait Ashram, P.20

11..Mitra, A.(2024) The Unique message of swami Vivekananda. Vivekananda international foundation. Endnote [5],Page,110 (Vivekananda-Sarvam Khalvidam Brahma)